इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में चित्रित किन्नरों की संस्कृति और पहचान

झड् ए गुलगुंदी*

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.19501762

ABSTRACT

इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यास किन्नर या थर्ड-जेंडर समुदाय की सामाजिक, मानसिक और सांस्कृतिक चुनौतियों को संवेदनशील और सशक्त रूप में प्रस्तुत करते हैं। ये उपन्यास पात्रों की आत्म-स्वीकृति, सामाजिक कलंक, पारिवारिक असहमति, आर्थिक बाधाओं और मानसिक संघर्षों के माध्यम से उनकी पहचान और प्रतिरोध की कहानियाँ बयां करते हैं। इक्कीसवीं सदी में यमदीप, किन्नर कथा, तीसरी ताली, मैं पायल, गुलाम मंडी, पोस्ट बॉक्स नं. 203 नालासोपारा, जिंदगी ५०-५० तथा जिंदगी एक जंजीर जैसे उपन्यास किन्नरों की त्रासदी पर लिखे गए हैं। किन्नरों को हर दिन सामाजिक उपेक्षा, पारिवारिक विरोध, आर्थिक और सामाजिक उपेक्षा से गुजरना पड़ता है। उद्धरणों से स्पष्ट हो जाता है कि किन्नर समुदाय न केवल अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहा है, बल्कि आत्म सम्मान, पहचान और स्वतंत्रता के लिए निरंतर संघर्ष कर रहा है। इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में किन्नर पात्रों की प्रस्तुति समाज में लैंगिक समानता और पहचान के महत्व को समझने के लिए आवश्यक है। यह न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है बल्कि सामाजिक परिवर्तन और संवेदनशीलता को बढ़ावा देने में भी योगदान देता है। इस आलेख में प्रमुख उपन्यासों के उद्धरणों और उनके संदर्भों के आधार पर किन्नर समुदाय की संस्कृति और पहचान की विवेचना की गई है।

KEYWORDS: किन्नर, थर्ड जेंडर, पहचान, हिंदी उपन्यास, सामाजिक कलंक, आत्म-स्वीकृति, प्रतिरोध.

* **डॉ. झड् ए गुलगुंदी**, सह प्राध्यापक तथा विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग, कर्नाटक कला महाविद्यालय, धारवाड़.

प्रस्तावना

हिंदी साहित्य में किन्नर विमर्श को लेकर बहुत-सी रचनाएँ लिखी गई हैं जिनमें नीरजा माधव का यमदीप, प्रदीप सौरभ का तीसरी ताली, निर्मला भुराडिया का गुलाम मंडी, चित्रा मुद्गल का पोस्ट बॉक्स नं. 203 नालासोपारा, भगवंत अनमोल का जिंदगी ५०-५० तथा राकेश शंकर भारती का जिंदगी एक जंजीर आदि उपन्यास उल्लेखनीय हैं। इन उपन्यासों में किन्नरों के जीवन संघर्ष को मार्मिकता के साथ उद्घाटित किया गया है। इन सभी उपन्यासों का आधार किन्नर ही हैं जिनसे समकालीन सभ्य समाज को रूबरू कराना लेखकों का उद्देश्य रहा है। समाज और परिवार में समान रूप से किन्नरों को अपमानित किया जाता है। समाज और परिवार से मिली घृणा से वे अपनी अलग दुनिया बनाकर अपनी अस्मिता व पहचान के लिए निरंतर संघर्षशील रहते हैं। उनकी सबसे बड़ी समस्या है अपनी संस्कृति और पहचान बनाए रखने की। इसके लिए वे निरंतर संघर्ष कर रहे हैं।

किन्नर अनुभव और सामाजिक कलंक

नीरजा माधव का बहुचर्चित उपन्यास 'यमदीप' इक्कीसवीं सदी का पहला उपन्यास है जो किन्नरों पर केंद्रित है। उपन्यास में नंदरानी का चरित्र सामाजिक कलंक और मानसिक संघर्ष का प्रतीक है। समाज में बहुत पहले से ही किन्नरों को मुख्य धारा से अलग रखने का सिलसिला रहा है। नंदरानी को भी लोग सशंक दृष्टि से देखते हैं, उसकी चाल-ढाल तथा पहनावे को देखकर उसे अपने से अलग मानते हैं। वह कहती है, "नंदरानी को हमेशा दिखाया गया कि वह 'अलग' है-पर उसने हमेशा सोचा कि असली अलग तो समाज है।"१ यह उद्धरण समाज की मानसिकता और सामाजिक धारणाओं को उजागर करता है। नंदरानी की "अलग" होने की अनुभूति व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामाजिक दबाव और पूर्वाग्रहों का परिणाम है। विद्यालय में लगातार निगाहों से तौला जाना और घर में अस्वीकृति का अनुभव उसे मानसिक दबाव में डालता है और एक संदर्भ में उसके साथ विद्यालय में किए जानेवाले व्यवहार को लेकर वह कहती है "जब भी वह स्कूल जाती, उसे लगातार बुरी नजरों से तौला जाता।"२ घर पर भी एक किन्नर को हर रोज अपमान का सामना करना पड़ता है। उसे हर दिन याद दिलाया जाता है कि वह परिवार के सभी सदस्यों से अलग है। समाज में अपमानित होने के कारण उसे अपना मानने से भी कतराते हैं। एक दृष्टांत में नंदरानी कहती है कि "घर की दीवारें उसकी पहचान को कभी स्वीकार नहीं कर सकीं।"३ यह दिखाता है कि सामाजिक कलंक केवल सार्वजनिक क्षेत्र में ही नहीं, बल्कि निजी और पारिवारिक जीवन में भी मौजूद रहता है। जिससे किन्नरों को दिनों दिन अपमानित होना पड़ता है।

महेंद्र भीष्म के उपन्यास 'किन्नर कथा' में भी किन्नरों के साथ किये जानेवाले सामाजिक और पारिवारिक दुर्व्यवहार को अंकित किया गया है। उपन्यास में एक पात्र कहते हैं, "कहीं भी बैठूँ, लोग देखते हैं जैसे मैंने कुछ गलत

किया हो।"४ समाज में जो नियम बनाए गए हैं उन्हीं नियमों के कारण आज किन्नरों को अपमानित होना पड़ता है। इन नियमों का विरोध करते एक किन्नर कहता है "जो मैं हूँ, वह गलत नहीं है; समाज है जो नियमों से बंधा है।"५ महेंद्र भीष्म ने अपने उपन्यास में किन्नरों के साथ किये जानेवाले व्यवहार का जो चित्र खींचा है वह बहुत ही मार्मिक है। एक किन्नर कहता है "हमारे घर में, हमारे लोग भी हमें नहीं समझ पाते। पर हिम्मत तो हमें खुद से ही रखनी होगी।"६ यह उद्धरण दर्शाता है कि किन्नर पात्रों के सामने सामाजिक कलंक और पारिवारिक असहमति एक साथ चुनौती पेश करती है। हालांकि, आत्म-स्वीकृति और आत्म-निर्भरता उनके मानसिक बल और पहचान की रक्षा का आधार बनती है।

प्रतिरोध और आत्म-अभिव्यक्ति

प्रदीप सौरभ का उपन्यास 'तीसरी ताली' किन्नर समुदाय के प्रतिरोध और आवाज़ की शक्ति को उजागर करता है: ताली ही उनकी पहचान और अस्तित्व का प्रतीक है। उनकी यह पहचान केवल एक सांस्कृतिक संकेत नहीं, बल्कि उनके संघर्ष, पीड़ा और समाज द्वारा झेले गए भेदभाव का प्रतीक है। "हमारी हर तालियों में दर्द का ढोल बजता है; तीसरी ताली उसी का प्रतीक है।"७ पौराणिक काल से ही किन्नर समुदाय की आवाज को दबाने की कोशिश की जा रही है, लेकिन वे निरंतर संघर्ष के चलते अपनी आवाज को दबने नहीं दिया। अपनी संस्कृति और पहचान बनाए रखने में सफल हुए हैं। उपन्यास में एक और दृष्टांत है जो उनकी संस्कृति और पहचान की जीवंतता को दर्शाता है। "हम शब्द नहीं, आवाज़ हैं-और हमारी आवाज़ को दबाया नहीं जा सकता।"८

चित्रा मुद्गल के उपन्यास 'पोस्ट बॉक्स नं.203 नालासोपारा' में माँ और बेटे के बीच के प्रेम को अंकित किया गया है। पात्र अपनी भावनाओं और पहचान को पत्रों के माध्यम से व्यक्त करता है: इस संदर्भ में बिन्नी कहता है "हर पत्र में मैंने खुद को ढूँढ़ा, और हर खोई हुई याद को पाया।"९ "समाज हमारी आवाज़ को नकारता है, पर हम इसे लिखकर रख सकते हैं।"१० ये उद्धरण दिखाते हैं कि सामाजिक अस्वीकार्यता के बावजूद किन्नर समुदाय अपनी आवाज़ और अस्तित्व को संरक्षित और सशक्त बनाए रखता है। किन्नर समुदाय को लंबे समय से समाज ने हाशिए पर रखा है। उनकी पहचान, अनुभव और संघर्ष को अनदेखा या अस्वीकार किया गया है। "समाज हमारी आवाज को नकारता है" इस वास्तविकता को दर्शाता है कि उनकी पीड़ा, अधिकारों की मांग और आत्म-अभिव्यक्ति को गंभीरता से नहीं लिया जाता। उन्हें न तो पर्याप्त सामाजिक स्वीकृति मिलती है, न ही बराबरी के अवसर। लेकिन वाक्य का दूसरा हिस्सा 'पर हम इसे लिखकर रख सकते हैं"- प्रतिरोध और आत्म सशक्तिकरण का प्रतीक है। जब मौखिक आवाज दबा दी जाती है, तब लेखन एक सशक्त माध्यम बन जाता है। किन्नर समुदाय अपने अनुभवों, संघर्ष और अस्तित्व को लिखकर इतिहास में दर्ज कर सकता है। यह लेखन न केवल उनकी पहचान को स्थायी

बनाता है, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा और जागरुकता का स्रोत भी बनता है।

आत्म-खोज और स्वीकृति

महेंद्र भीष्म का उपन्यास 'मैं पायल' आत्म-खोज और आत्म-स्वीकृति पर केंद्रित उपन्यास है: पायल की जीवन त्रासदी पर केंद्रित यह उपन्यास आत्म खोज और स्वीकृति जैसे मुद्दे पर लिखा गया है। पायल अपनी शारीरिक कमियों को सकारात्मक रूप से स्वीकारती है। वह कहती है "पायल की ध्वनि मेरे कदमों में नहीं, मेरी आत्मा में है।"११ संसार में कोई भी ऐसा नहीं चाहेगा कि उनकी संतान एक किन्नर हो। एक बच्चा अगर किन्नर के रूप में जन्म लेता है तो उसमें न उसकी गलती होती है न उसके माता पिता की, इस सच्चाई को समझे बिना ही यह निर्दयी समाज उन्हें अपने से अलग मानकर मुख्य धारा से अलग रखने की कोशिश करता है। ऐसे में किन्नर अकेले पड़ जाते हैं। उन्हें समाज में कई तरह के तिरस्कारों से गुज़रना पड़ता है। ऐसे में उन्हें आत्मनिर्भर बनने की आवश्यकता है। समाज की मनःस्थिति को समझकर उसी के अनुसार अपनी पहचान बनाने की आवश्यकता है। पायल का मानना है कि जिस रूप में जन्म होता है उसी रूप को स्वीकार करने की आवश्यकता है। समाज में कदम कदम पर उन्हें हँसी मजाक और अपमान का शिकार होना पड़ता है। इसे नकारात्मक रूप में न लेकर सकारात्मक रूप में लेना है। इन सामाजिक तिरस्कार और अपमान से निराश न होकर अपना जैसा रूप है उसे स्वीकार कर जीवन यापन करने की आवश्यकता है क्योंकि रूप केवल दिखावे के लिए होता है। एक संदर्भ में पायल का कहना है कि "मैं पीठ पीछे की हँसी से नहीं डरती; मैं वही हूँ जो मैं हूँ।"१२ इन दोनों उद्धरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि असली पहचान बाहरी स्वीकृति से नहीं, बल्कि आंतरिक अनुभव और आत्म-सम्मान से आती है।

सामाजिक और आर्थिक बाधाएँ

निर्मला भुराड़िया का उपन्यास 'गुलाम मंडी' आर्थिक और सामाजिक प्रतिबंधों पर केंद्रित है: मुगलों के काल में किन्नरों को अपने दरबार में गुलामों की तरह रखा जाता था। इन्हें सैनिको से ज्यादा भरोसेमंद माना जाता था और बादशाह अपने रनिवास में अपनी बेगमों की देखभाल के लिए किन्नरों को ही नियुक्त करते थे। वही दृष्टिकोण आज भी समाज में दिखाई देता है। समाज में किन्नरों को आज भी गुलाम की दृष्टि से देखा जाता है। उपन्यास में किन्नर अपनी सामाजिक स्थिति को व्यक्त करते हुए कहते हैं "हम गुलाम नहीं, पर मंडी की निगाहों के गुलाम बन चुके हैं।"१३ आज किन्नर समाज में मान-सम्मान के साथ जीने का प्रयास कर रहे हैं परंतु उनके प्रति समाज का दृष्टिकोण वैसा का वैसा ही है। वे सामान्य लोगों की तरह जीवन यापन करना चाहते हैं। आज किन्नर समुदाय शिक्षा की बदौलत ससम्मान जीवन जीने की कोशिश तो कर रहा है लेकिन सामाजिक भेद-भाव के चलते वे वैसा जीवन नहीं जी पा रहे हैं जिसके वे हकदार हैं। उन्हें बार बार याद दिलाया जाता है कि समाज में उनकी पहचान

क्या है और वे कैसे अन्य लोगों से भिन्न हैं। उनके लिए यह सभ्य समाज एक सीमा तय कर चुका है, उन्हें उसी सीमा में रहने के लिए मजबूर किया जाता है। वे चाहकर भी उस सीमा से बाहर नहीं निकल पाते। गुलाम मंडी उपन्यास में ही एक संदर्भ है जिसमें किन्नर कहते हैं "सपने भी हमें उन्हीं सीमाओं में दिखाए जाते हैं जिन्हें समाज ने तय किया है।"१४

राकेश शंकर भारती के नए उपन्यास 'जिंदगी एक जंजीर' में किन्नरों की मानसिक और सांस्कृतिक बाधाओं को रेखांकित किया गया है: किन्नर सामाजिक और आर्थिक जंजीर से बंधे रहते हैं, लाख कोशिशों के बावजूद वे इस बंधन से मुक्त नहीं हो पाते, जीवन के अंत तक उसी जंजीर से बंधे रहते हैं। यह सभ्य समाज न खुद अपनी सोच बदल रहा है और न ही किन्नरों को बदलने दे रहा है। उपन्यास के एक दृष्टांत में किन्नर कहते हैं कि "जंजीरें बाहरी नहीं, वे हमारी सोच के भीतर पिरोई हुई हैं।"१५ हर एक व्यक्ति की एक पहचान होती है, उसी पहचान के लिए वह निरंतर संघर्ष करता रहता है क्योंकि उसी पहचान से समाज में गौरव मिलता रहता है लेकिन उस पहचान को यह समाज पहचान नहीं पाता "हर पहचान को समाज नहीं जानता-लेकिन वही पहचान इंसान को गौरव देती है।"१६ सदियों से किन्नर अपनी पहचान बनाने के लिए निरंतर संघर्ष कर रहे हैं, सन् २०१४ के बाद उन्हें थोड़ा बहुत मान-सम्मान मिलने लगा है, लेकिन उनके अस्तित्व और स्वतंत्रता की लड़ाई अभी भी जारी है। इस लड़ाई का कोई अंत नहीं दिखाई देता। "हमारी स्वतंत्रता की लड़ाई कभी समाप्त नहीं होती।"१७ यह दिखाता है कि मानसिक और सांस्कृतिक संरचनाएँ भी किन्नर पात्रों के संघर्ष का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं।

निष्कर्ष

इन उपन्यासों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि २१वीं सदी का हिंदी साहित्य किन्नर समुदाय की सामाजिक, मानसिक और सांस्कृतिक पहचान को संवेदनशील और सशक्त रूप में प्रस्तुत करता है। पात्र सामाजिक कलंक, पारिवारिक और सामाजिक असहमति, आर्थिक और मानसिक बाधाओं के बावजूद अपनी पहचान बनाए रखते हैं। विवेच्य उपन्यासों में अंकित उद्धरणों और संदर्भों से यह भी पता चलता है कि साहित्य किन्नर समुदाय की विविधताओं, संघर्षों और प्रतिरोध को समझने और मान्यता देने में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

संदर्भ सूची

1. माधव, नीरजा. यमदीप. पृ. 42, 50, 61.
2. भीष्म, महेंद्र. किन्नर कथा. पृ. 19, 97, 112.
3. सौरभ, प्रदीप. तीसरी ताली. पृ. 12, 174.
4. भीष्म, महेंद्र. मैं पायल. पृ. 57, 120.
5. भुराड़िया, निर्मला. गुलाम मंडी. पृ. 33, 58.
6. मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं.203 नालासोपारा. पृ. 25, 42.
7. शंकर भारती, राकेश. ज़िन्दगी एक जंजीर. पृ. 89, 105, 134.